आखर हिंदी पत्रिका ; e-ISSN-2583-0597 खंड 2/अंक 1/मार्च 2022
Received: 17/02/2022; Accepted: 22/2/2022; Published: 24/3/2022

मरुस्थल की मंदाकिनी मीराबाई

डॉ.विलास अंबादास साळुंके
हिन्दी सहायक प्राध्यापक,
सरकारी प्रथम श्रेणी महाविद्यालय,सेडम

डॉ.विलास अंबादास साळुंके, **मरुस्थल की मंदाकिनी मीराबाई**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 2/अंक 1 / मार्च 2022, पृष्ट(30-38)

मीराबाई की पृष्ठभूमि:

बात पाँच सौ साल पहले की है, यह वह समय था जब भारत में तुर्की और इरानी ताकतें हिंदुस्तान में लूट नहीं बल्कि हुकूमत के इरादे से पैर जमा रहीं थी । अकबर तेजी से अपना राज्य बडा रहे थे अगर कोई था उनके सामने डटकर खडा होनेवाला तो वह था राजस्थान । राजस्थान जहाँ के राजपूत अपनी मिट्टी, अपने धर्म और अपने वचन को लेकर लक्ष्मणरेखा से भी ज्यादा पक्के थे । थे और दौर था जब तलवार तलवार को पूछती थी और धर्म के नामपर सर उतारे जाने में एक मिनट नहीं लगता था। मोगलराज पूतों की नफरत में जला और राजपूत मुगलों के कारण अपनी नींद खोते थे। इस राजनीतिक उथल-पुथल के बीच एक ऐसी कहानी राजस्थान की मिट्टी से जुडी जिसे वक्त ने अमर कर दिया। राजस्थान के मेडता में राठौरों का राज्य था, वही राठौर जिन्होंने जोधपूर बसाया और इसी राजपूत परिवार में १५ वीं शती के अंत में राजस्थान की उस मिट्टी में एक गंगा उतरी, शीतल पावनगंगा। मीराबाई के रुप में धरा पर ऊतर आयी जिसे पूरा राजस्थान देवी के रुप में जानता है।

मीराबाई का जीवन परिचय :

मेरे तो गिरधरगोपाल दूसरों न कोई । कह कर राजस्थान के मरुस्थल की मंदाकिनी जिसने बंद होठों से ही पुरुष वर्चस्ववादि ताकतों को चुनौति देकर अपनी एक मंडली तैयार की थी, जो नाम बदलकर,पारिवारिक बंधनों से बंधने के बावजूद भी इस वर्चस्ववादि ताकतों का विरोध करनेवाली भक्तिकाल की सबसे बडी भक्ति रही मीराबाई का जन्म १४९८ में एक राजपरिवार में हुआ था। वैसे तो मीराबाई के जीवन से संबंधित कोई भी

विश्वसनीय ऐतिहासिक दस्तावेज नहीं हैं। जो कुछ भी थोडे बहुत दस्तावेज प्राप्त हुए हैं उनके आधारपर यह बात कही जाती है।
मीरा के पिता रतनसिंह राठौड एक छोटे से राजपूत सियासत के शासक थे। मीरा अपने माता-पिता की अकेली संतान थी। जब वह छोटी बच्ची थी तभी उनकी माता का देहांत हो गया था। माता-पिता की मृत्यू के पश्चात मीरा का लालन-पालन उनके दादा (रावदूदा) की देख-रेख में हुआ, जो एक योद्धा होते हुए भी भगवान विष्णु के परम भक्त एवं उनके गंभीर उपासक थे। इसी कारणवश इनके घर साधु-संतों का आना-जाना लगा रहता था। जाहिर है कि सहज ही मीरा पर बचपन से ही साधु-संतों की संगति के चलते धार्मिक वातावरण प्राप्त हुआ ।

बाल्यकाल से ही एक घटना के चलते वह कृष्ण की अनन्य भक्त बन गयी थी और जीवन के अंतिम सांसतक अपने सर्वस्व कृष्ण को समर्पित कर चुकी थी । वह घटना है एक बार मीरा के घर के पडोस में एक बारात जा रही थी। सभी स्त्रियाँ जैसा आज भी हम उत्सव हो, बारात हो, जात्रा हो या अन्य कोई पालकी महोत्सव अधिकतर स्त्रियाँ अपने घरों की खिडकियों या छतों से निहारती हैं, ठीक ऐसे ही मीरा ही अपने घर की छत से उस बारात को निहार रही थी, बारात में दूल्हे को देखकर मीरा ने अपनी माता से पूछा मेरा दूल्हा कौन है तब उसकी माताने कृष्ण की मूर्ति की तरफ इशारा करते हुए कहा कि वही तुम्हारा दूल्हा है और क्या तब से मीरा के बाल मन पर यह बात गाँठ की तरह बैठ गई।

विवाह:

मीरा का विवाह मेवाड के राणा सांगा के पुत्र भोजराज से सन १५१६ में हुआ था। किन्तु दुर्दैवशात कुछ ही वर्षोंपरांत यानि सन १५१८ में भोजराज और दिल्ली सल्तनत के शासकों के बीच हुए संघर्ष में राजा भोजराज गंभीर रुप से घायल हो गए और इसी के चलते सन १५२१ में उनकी मृत्यु हो गयी। जब मीरा का विवाह राजा भोजराज के साथ हुआ तब उसकी उम्र केवल १२ वर्ष की थी।
पति की मृत्यु के पश्चात दु:खों का जो पहाड मीरा पर पडा उस वैराग्य को, उस एकाकीपन को भूलने वह कृष्ण की भक्ति में तल्लीन होती हुई हम देखते जाते हैं । साधु संतों की संगति एवं भजन कीर्तन में मग्न होकर अपने विरह को, दु:ख को भूलने की कोशिश किया करती थी। वह कृष्ण की भक्ति में इतनी तल्लीन हो गई कि राजमर्यादा एवं लोक-लज्जा की सुध तक उसे न रही। इसी कारणवश उसे अनेक तकलिफों से गुजरना पडा, यहाँ तक कि ससुराल वालों ने उस पर देशद्रोह का आरोप लगाकर उसे विष देकर मारने की कोशिश भी की गई। मीरा एक जगह कहती भी है-

"राणाजी ने भेजा विष का प्याला
सो अमृत कर पीज्यो जी!"1

किन्तु भगवान की कृपा से उस विष का कोई असर इन पर नहीं पडा। मीरा चाहती तो अपने पति भोजराज ने अगले दिन की सभा में मीरा को विष देने की बात हो जाती उसे सलाखों के पीछे रखा जाता है। तब भोजराज

निरुपाय होकर मीरा की सखी संजुक्ता को साथ लेकर उसे समझाने के लिएआतेहैं और कहते हैं मीरा क्षमा माँगलो उनसे, कृष्ण को भूलकर दुर्गा की पुजा करना स्वीकार कर लो । किन्तु मीरा ने कहा कैसे भूलूँ! तुम मेरे राणा हो और कृष्णा मेरे ठाकूर हैं। उन्हें कैसे भूलूँ? भोजराज अनेक प्रकार से मीरा को समझाने के कोशिश करते हैं किन्तु सब व्यर्थ हो जाता है क्योंकि मीरा का मन अपने वश में नहीं थी, वह कृष्ण की जोगन बन गयी थी। इसमें दोष न भोजराज का था और ना ही मीरा का गलती तो परिस्थितियों की थी। अंत में अपनी मीरा को बचाने भोज उसे वहाँ से भाग जाने की बात करते हैं किन्तु मीरा कहती है क्या कहा राणा मैं भाग जाऊँ, क्या भाग जाने तुम्हारी बदनामी नहीं होगी, क्या मैं राणा की राजपूतनी नहीं हूँ। ये मेरी लढाई है राणा मुझे लडने दो राणा मेरे पथ का बाधा मत बनो। मैं अपने कान्हा के लिए ये लढाई खुद लढूंगी।

कहा जाता है कि परिवारवालों के इस प्रकार के बर्ताव से तंग आकर मीरा ने गोस्वामी तुलसीदास को एक पत्र लिखा था तो उसके उत्तर में तुलसीदासजीने लिखा था-

"जाके प्रिय न राम वैदेही
तजिए नाहि कोटि वैरी सम यद्यपि परम सनेही।"2

अपने पति के विरह में पटरानी होने के बावजूद भी जो झेला वह सामान्य समस्याएँ नहीं थी। बावजूद इसके उसने अपने व्यक्तित्व को उभारने की कोशिश करती है। मीरा राजपरिवार से जुडी होने के कारण ससुराल वालों द्वारा उसपर लादे जानेवाले अन्यायों को वहाँ तक सहन किया जहाँ तक सहना था किन्तु अन्याय अपने सर चढकर जब बोलने लगा तो उसने परिवार की बेडियों को तोडकर अर्थात एक राजपरिवार की बहू होने की भावना का त्याग कर, समाज के सभी बंधनों तोडकर सारी हिम्मत एकजुट करके वह वृंदावन निकल पडी जहाँ उसके गिरिधारी गोपाल रहा करते थे।

इसी प्रकार का धैर्य हमें अक्कमहादेवी में भी देखने को मिलता है वह एक जगह कहती है -

बेट्टद मेलोंदु मनेय माडी
मृगगळीतंजीदडेंतय्या?
समुद्रद तडीयलोंदु मनेय माडी
नोरेतेरेगळीगंजीदडेंतय्या?
संतेयोळगोंदु मनेय माडी
शब्दक्के नाचीदडेंतय्या?
चन्नमल्लिकार्जुन देव केळय्या?
लोकदोळगे हुट्टीद बळीक स्तुतिनिंदनेगळु बंदडे
मनदल्ली कोपद ताळद समाधानियागीरबेकु

कृष्ण के प्यार में पागल में मीरा उसकी जोगन बन गई थी। पति की मृत्यू के पश्चात वैधव्य जीवन ही स्त्री के लिए सबसे बडा शाप होता है ऐसे संदर्भ में परिवार के लोगों से अपनत्व के प्यार भरे व्यवहारकी उसकी अपेक्षा होती है किन्तु मीरा के साथ ठीक इसके विपरीत होता गया और उसका मन और भी उदासीन होता गया इसी

उदासीनता के चलते जिसे वह बचपन में ही अपना पति मान चुकी थी उसे मिलने वृंदावन आती है और श्रीकृष्ण से अपने व्याकूल मन की दशा को दर्शाने के साथ ही साथ कृष्ण के मनमोहक रुप का वर्णन भी प्रस्तुत पद में वह करती हुई में दिखाई देती है -

स्याम म्हाने चाकर राखो जी,
गिरधारी लाला म्हाँने चाकर राखो जी।
चाकर रहस्यूँ बाग लगास्यूँ नित उठ दरसण पास्यूँ।
बिन्दरावन री कुंज गली में, गोविन्द लीला गास्यूँ।
चाकरी में दरसन पास्यूँ,सुमरन पास्यूँ खरची।
भाव भगती जागीरी पास्यूँ, तीनूं बातां सरसी।
मोर मुगट पीताम्बर सौहे, लग वैजन्ती माला।
बिन्दरावन में धेनु चरावे, मोहन मुरली वाला।
ऊँचा-ऊँचा महल बनावं बिच-बिच राखूँ बारी।
साँवरियाँ रा दरसण पास्यूँ,पहर कुसुम्बी साडी।
आधी रात प्रभु दरसण, दीज्यो जमनाजी रे तीरा।
मीराँ रा प्रभु गिरधर नागर, हिवडो घणो अधीरा।

इतना ही नहीं मीरा अपने भक्त वत्सल, भक्त प्रेमी से अपने मन के दु:ख को दूर करने की बात करते हुए कहती है जिस प्रकार तुमने मुसीबत में रहनेवाली द्रोपदी, ऐरावत हाथी, भक्त प्रल्हाद की रक्षा की है उसी प्रकार मेरी भी रक्षा करने की याचना करते हुए मीरा दिखाई देती है वह कहती है-

हरि आप हरो जन री भीर ।
द्रोपदी री लाज राखी, आप बढायो चीर ।
भगत कारण रुप नरहरि, धरयो आप सरीर।
बूढतो गजराज राख्यो, काटी कुन्जर पीर।
दासी मीराँ लाल गिरधर, हरो म्हारी भीर ।

मिलन की जिज्ञासा:

कृष्ण को ही अपना सर्वस्व माननेवाली उससे मिलने के लिए इतनी अधीर है कि उसके बिना तनिक भी चैन अब है नहीं, अपने प्रिय के मिलन की उत्कट जिज्ञासा मिरा में दिखाई देती है। जिसे मन ही मन अपना लिया जो

जिसपर अपना सर्वस्व न्योछावर किया गया हो उसके बिना जीना कितना दुश्कर होता है इसका एक सुन्दर एवं भावों से युक्त उदाहरण निम्नलिखित पद में दिखाई देता है-

“राह तके मेरे नैन
अब तो दरस दे दो कुन्ज बिहारी
मनवा हैं बेचैन
नेह की डोरी तुम संग जोरी
हमसे तो नहीं जावेगी तोडी
हे मुरलीधर कृष्ण मुरारी
तनिक ना आवे चैन
राह तके मेरे नैन .....
मैं म्हारों सुपनमा
लिसतें तो मैं म्हारों सुपनमा।”3

एक ओर कृष्ण के संयोग पक्ष में अपने पदावलियों को गानेवाली मीरा दूसरे ही स्थान पर उसके विरह की पदावली भी रच देती है क्योंकि तीनों लोकों के स्वामी कृष्ण चौबीसों घंटे मीरा के साथ तो रह नहीं सकते जगत उद्धार के लिए उन्हें जाना ही पडता है जब कृष्ण किसी कारण वश उसे मिलने नहीं आते तब उनके विरह में उनसे मिलने को बेचैन मीरा मतवाले बादलों से पूछती है-

मतवारो बादल आयें रे
हरी को संदेसों कछु न लायें रे
दादूर मोर पपीहा बोले
कोएल सबद सुनावे रे
काली अंधियारी बिजली चमके
बिरहिना अती दर्पाये रे
मन रे परसी हरी के चरण
लिसतें तो मन रे परसी हरी के चरण।

मीराबाई अपने जीवन के अंतिम दिनों अपने आराध्य श्रीकृष्ण से मिलने के लिए इतनी अतुर हो गई थी कि द्वारिका में एक कृष्ण के विरह में भूख एवं प्यास से व्याकुल मीरा पेड के नीचे बैठी थी कि उसी पेड की डाल पर एक कौआ बैठा हुआ था जो बहुत जोर-जोर से काँव-काँव कर रहा था । मीरा ने उस कौए की ओर देखा और कहा-

काडे कलेजा मैं धरुरे, कागा तु लेजा
म्हारा एक शर्त होए, ज्या दिशा म्हारा पिया दिसे
उनके सामने नोच-नोच खाले।

अर्थात है कौए तुझे बहुत भूख लगी है ना, तो तु मेरा कलेजा लेजा जिसे मैं निकालकर तुझे दूंगी लेकिन मेरी एक शर्त है उसे तुम अभी नहीं बल्कि जहाँ मेरा पिया हो वहाँ इसे लेकर जाना और उनके सामने इसे नोच-नोच कर

खा लेना ताकि उन्हें भी उस पीडा का एहसास हो जिसे उनसे दूर रहकर मेरा दिल उस पीडा को हर रोज सहता है। दिल निकालकर देना तो कुछ भी नहीं है मुझे हर दिन उससे अधिक पीडा अपने कान्हा से दूर रहकर होती है।

यह पूरी घटना वहाँ गुजरते एक पुजारी ने देखी। एक नजर मीरा की ओर देखा और मूँह टेढा कर मानो मीरा को पागल समझकर वह आगे बढ गया। वह जिस मंदिर का पुजारी था वह मंदिर भगवान श्रीकृष्ण का ही था। उसने मूर्ति की पूजा कर कान्हा हो भोग लगाने आगे बढा तो उसने देखा कि कान्हा की आँखों से पानी बह रहा है। उसने कपडे से आँसू पोछकर फिर कान्हा को खिलाने की कोशिश की किन्तु वह असफल रहा अर्थात हाथ से थाली नीचे गिर गयी। पंडित को समझते देर नहीं लगी की आज उनके कान्हा दु:खी क्यों हैं। उसने सोचा कि दुनिया के मालिक को किसका दु:ख है, लेकिन सच तो यह था कि भगवान की आँखों से आँसू बह रहे थे। उतने में पुजारी के सामने मीरा की छवि दिखाई दी। पुजारी को ये सब माजरा समझ में आ गया। वह दौडते हुए मीरा के पास आया किन्तु उसे फिर कभी मीरा के दर्शन हुए नहीं।

संयोग पक्ष:

मीरा कृष्णा के साथ भाव जगत में ऐक्य का अनुभव करती है। उन्होंने अपने अनेक पदों में इसकी भावाभिव्यक्ति की है। यहाँ तक की कहा जाता है कि एक बार मिरा दरवाजा बंद अपने कमरे बैठी हुई किसी बातें कर रही थीं इसे सुन जब राजा भोजराज भीतर आकर देखते हैं तो मीरा मूर्ति के साथ बातें कर रही थी। कहने का तात्पर्य है कि मीरा के प्रेम में इतनी अद्भुत शक्ति थी कि अलौकिक कृष्ण अपनी मीरा के लौकिक रुप धारण कर उससे मिलने आते थे। तभी तो मिरा लिखती है-

‘मैं तो सांवरे के रंग रांची।

साजिद सिंगार बांधि पग घुंघरु लोक लाज तजी नांची॥’

मीराबाई के पदों संयोग और वियोग दोनों पक्षों का वर्णन मीराबाई की पदावलियों में हमें मिलता है । राम की भक्ति जिसे प्राप्त होती है उसे दुनिया के किसी चीज की आवश्यकता ही नहीं होती । वही हमारी सबसे बडी अमूल्य निधी है जिसे पाने के लिए गुरु की आवश्यकता होती है इसीलिए मीरा अपने पदावली में एक जगह कहती भी है-

गुरु मिलिया रैदास, दीन्ही ज्ञान की गुटकी।

बिना गुरु के इस दुनिया में किसी को कुछ नहीं मिलता । यह एक ऐसा ज्ञान होता है जिसे कोई चुरा नहीं सकता इसी ज्ञान रुपी अंतिम सत्य को पाकर अपने विरह से मुक्त होने की मनशा मीरा की दिखाई देती है वह लिखती है -

“पायो जी मैंने राम रतन धन पायो...
वस्तु अमोलिक दी मेरे सतगुरु
किरपा करि अपनायो..
पायो जी मैंने राम रतन धन पाया
जनम जनम की पूंजी पाई जग में

सभी खोवायो.
पायो जी मैंने.......पायो।
खरचै न खूटै चोर न लूटै दिन दिन
बढत सवायो...
पायो जी मैने राम रतन धन पायो।
सत की नाव खेवटिया सतगुरु
भवसागर तर आयो
पायो जी मैंने राम रतन धन पायो।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर हरष
हरष जस गायो...
पायो जी मैंने राम रतन धन पायो।"4

भक्ति को व्यक्त करना:

भक्ति में केवल भक्त और भगवान ही होता है। जब भगवान भी भक्त के भक्ति में डूब जाते हैं तो वे एक क्षण के लिए भूल जाते हैं कि मैं भगवान हूँ अर्थात वे भक्तस्वरुप बन जाते हैं। यही शबरी के साथ भी हुआ।
मीरा अपने आराध्य श्रीकृष्ण से विनती करती है हे कृष्ण जिस प्रकार एक बूढि कुरुप स्त्री को प्रभू राम ने दर्शन देकर, उसके झूठे बेर खाये। प्रभू के साक्षात दर्शन से शबरी की जीवन धन्य हुआ और उसे वैकुंठ का आसन प्राप्त हुआ । हे ! देव मैं भी तुमसे ऐसी ही भक्ति करती हूँ मुझे अपनी दासी स्वीकार कर अपने चरणों में स्थान देने की सुन्दर भावाभिव्यक्ति प्रस्तुत पंक्तियों में व्यक्त होती है वह लिखती है-

अच्छे मीठे फल चाख,बेर लाई भीलणी।
ऐसी कहा अचारवती, रुप नहीं एक रती।
नीचे कुल ओछी जात, अति ही कुचीलणी।
जूठे फल लीन्हें राम, प्रेम की प्रतीत त्राण।
ऊँच नीचे जाने नहीं, रस की रसीलणीं।
ऐसी कहा वेद पढी, छिन में विमाणा चढी।
हरि जू सू बाँध्यो हेत, बैकुण्ठ में झूलणी।
दास मीरां तरै सोई, ऐसी प्रीति करै जोइ।
पतित पावन प्रभु,गोकुल अहीरणी।

१२ वीं शती के क्रांतिकारी संत महात्मा बसवेश्वर ने भी भक्त की श्रेष्ठता को व्यक्त करते हुए कहा था- एनगिंत किरीयरिल्ल शिवभक्तरी गींत हिरीयरिल्ल (मुझसे कोई छोटा नहीं और शिवभक्त से कोई बडा नहीं) की बात करते हैं।

मीरा का माधुर्य भक्ति (समर्पण का भाव):

माधुर्य भक्ति के अंतर्गत भक्त और भगवान में प्रेम का संबंध होता है। प्रेम के मिलन और विरह दोनों पक्षों की सुन्दर अभिव्यक्ति मीरा के काव्य में मिलती है। यह अभिव्यक्ति अत्यंत सीधे-सादे और सरल रुप में हुई है जिसमें प्रेम, विश्वास और समर्पण की भावना विद्यमान है। यही समर्पण भाव मीरा में दिखाई देता है वह कृष्ण प्रेम में इतनी डूब गयी है कि अपने प्रेम को पाने के लिए वह अपने से दूर ना जाये, सदा अपने साथ ही रहकर मुझपर अपना संपूर्ण हक जताने की बात मीरा करती है वह लिखती है-

मैं गिरधर के घर जाऊँ,

गिरधर म्हाँरो साँचो प्रीतम, देखत रुप लुभाऊँ

रैण पडै तब ही उठि जाऊँ, भोर भए उठि आऊँ।

रैणदिना वाके संग खेलुं, ज्यूँ-त्यूं वाहि लुभाऊँ।

जो पहिरावै सोई पहिरुं, जो दे सोई खाऊं।

मेरी उणकी प्रीत पुराणी, उण बिण पल न रहाऊँ।

जहाँ बैठावें तितही बैठुं, बेचे तो बिक जाऊँ।

मीरा के प्रभू गिरधर नागर, बार-बार बलि जाऊँ॥

मीरा के बहुतायत पदों में 'देखत रुप लुभाऊँ' यह पंक्तियाँ बहुत जगह मिलती हैं। कृष्ण का मोहक रुप उसे भा गया है और कृष्ण मीरा के नेत्रों के माध्यम से उसके हृदय में प्रवेश कर गये हैं जिसके कारण मीरा कृष्ण की दिवानी हो गयी है। इसीलिए तो वह कहती है-

जिह-जिह विधि रीझै हरी, सोई विधि कीजै हो ।

मीराबाई के पदों की भाषाशैली, रस एवं अलंकारविधान:

मीराबाई की महानता और उनकी लोकप्रियता उनके पदों और रचनाओं की वजह से है। ये पद और रचनाएँ राजस्थानी, ब्रज और गुजराती भाषाओं में मिलते हैं। मीरा की भाषा मूलत: ब्रजभाषा है जिसमें राजस्थानी तथा गुजराती के शब्दों की प्रचुरता भी है। खडीबोली के पूर्वरुप को भी मीरा के काव्य में यत्र-तत्र देखा जा सकता है जैसे:

1) पिव मेरा मैं पीव की।
2) जोगी मत जा, मत जा, मत जा।
3) ऐसे वर का क्या करुँ जो जनमेम और मर जाय।

मीराबाई की भाषा में कोमलता, मधुरता और सरसता के गुण दिखाई देते हैं। हृदय की गहरी पीडा, विरहानुभूति और प्रेम की तन्मयता से भरे हुए मीराबाई के पद अनमोल संपत्ति हैं। आँसूओं से भरे ये पद गीतिकाव्य के उत्तम नमूने हैं।

पदावली कोमल,भावानुकूल व प्रवाहमयी है, पदों में भक्तिरस है तथा उप्मा, अनुप्रास, दृष्टांत, पुनरुक्ति प्रकाश, रुपक आदि अलंकारों का सहज प्रयोग दिखाई देता है।

पदों में शृंगार रस और शांत रस का प्रयोग विशेष रुप से किया है।

भाव सौंदर्य:

भक्तिकाव्य में मीरा एक अलग व्यक्तित्व की स्वामिनी है। मीरा में कभी चैतन्य महाप्रभु की माधुर्य भक्ति की परंपरा दिखाई देती है तो कभी सूफी काव्य-परंपरा से भाव-साम्य भी देखा जा सकता है। पर सत्य तो यह है कि मीरा इन सभी से अलग अपनी छाप छोड जाती है क्योंकि उनके काव्य में अनुभूति की तीव्रता और सघनता पाई जाती है। १५-१६ वी शताब्दी में वैयक्तिक अनुभूतियों की ऐसी अभिव्यंजना वास्तव में अनूठी है।

उपसंहार:

इस प्रकार हम देखते हैं कि भक्ति के तपोवन की शकुंतला तथा राजस्थान के मरुस्थल की मंदाकिनी नामों से जाने जानेवाली मीरा भक्तिकाल की एक ऐसी भक्तिन थी जिसने बंद होंठों से ही तत्कालीन परिस्थितियों का डटकर सामना किया।

संदर्भ ग्रन्थ:

1.हिन्दी साहित्य का इतिहास डॉ.विजयपाल सिंह-पृ.सं-149(Hindi Sahitya ka Itihas-Dr.Vijaypal Sinh)

2.यु.जी.सी. नेट/सेट परीक्षा (पेपर-2)-डॉ.अशोक तिवारी-पृ.सं-115(UGC, NET/SLET Examination-Paper-II-Dr.Ashok Tiwari Page no:115)

3.संत तथा शरण साहित्य की प्रासंगिकता-डॉ.विद्यावती तिवारी,प्रा.धन्यकुमार बिराजदार-पृ.सं-214(Sant tatha Sharan Sahitya kee Prasangikta-Dr.Vidyavati Tiwari& Prof.Dhanyakumar Birajadar-Page no:214)

4.संत तथा शरण साहित्य की प्रासंगिकता-डॉ.विद्यावती तिवारी,प्रा.धन्यकुमार बिराजदार-पृ.सं-215(Sant tatha Sharan Sahitya kee Prasangikta-Dr.Vidyavati Tiwari& Prof.Dhanyakumar Birajadar-Page no:215)

5.अन्तर्जाल से प्राप्त सामग्री (Supporting Material obtained from the internet)

****